ज्ञानेन्द्र चौहान

बाहर से पास	प्यासे मंसूबे
मुट्ठी में सागर है, अधरों पर प्यास चेहरों पर मुस्कानें भीतर संत्रास सुबह सुबह लोग सिर्फ पढते अखबार, बाकी की दिनचर्या केवल व्यापार, ख्वाबों में चांद और सिर पर आकाश समय नहीं लोगों को मिल जुल कर चलें, चलन नहीं शेष रहा आपस में घुले कहें किसे ऐसे में हम अपना खास धागे से टूट गये सारे सम्बन्ध, खो बैठे हम अपने गीत और छंद, भीतर से दूर बहुत बाहर से पास	मरूथल में भटक रहा मन का मृगछौना नौकर हैं, चाकर हैं कोठी है कार, पल भर को चैन नहीं सब कुछ बेकार, पैसों के हाथों का आदमी खिलौना नरभक्षी आज हुए सारे सम्बन्ध, सड़कों पर फैली है बारूदी गंध, आवरण सुनहला पर आचरण घिनौना भौतिक सुख सागर में लोग आज डूबे, होठों पर शेष किन्तु प्यासे मंसूबे, शूलों को फूलों का मिल रहा बिछौना
('नये–पुराने' गीत अंक–4, 1999 से साभार)	सम्पर्क– दादूपुर, बंथरा लखनऊ